

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

यज्ञकर्म में शुचिता की आवश्यकता

पवित्रतायुक्त व्यक्ति कर्म करने का अधिकारी होता है-

"सदाकुर्याद्धर्मकार्यमापद्य- पिशुचिर्नरः" ।(टोडरानन्दे सप्तर्षिस्मृति)

आपत्तिकाल में भी मनुष्य को पवित्र होकर धर्म-कर्म करना चाहिए ऐसा टोडरानन्द सप्तर्षि स्मृति ग्रन्थ का कथन है। यह बात श्रीटोडरमल्ल विरचित धर्मसार गन्ध के धर्मलक्षण में भी कही गई है -

"श्रुतिस्मृत्युदितं कर्म न कुर्यादशुचिः क्वचिदिति" । (प्रयोग परिजाते भृगुक्तेश्च ॥)

यज्ञ में अशक्ततावस्था तथा प्रतिनिधि-

श्रुति एवं स्मृति में कहे हुए कर्म को कहीं कभी भी मनुष्य अपवित्रावस्था में न करे, ऐसा प्रयोग परिजात ग्रन्थ में महर्षि भृगु का कथन है -

"शक्तिश्चाधिकारी विशेषणम्" आख्यातानामर्थं ब्रुवतां शक्तिः सहकारिणीति न्यायात् ।

शक्ति (सामर्थ्य) अधिकारी (कर्माधिकारी) का विशेषण है। अर्थ को कहने वाली आख्यात-क्रिया सहकारिणी शक्ति होती है । अर्थात् "देवदत्तः पचति" वाक्य में पचति, क्रिया में पाकं करोति, पकाने का व्यापार शक्ति के बिना संभव नहीं। यह शक्ति क्रिया पद में अप्रत्यक्ष रूप से पाचक की सहकारिणी होती है। यह सर्वत्र सामान्य न्याय है। अतः शक्ति के अभाव में यदि प्रारम्भ नित्य एवं काम्य कर्म के बीच में कर्मकर्ता स्वयं रोगादि वशात् कर्म करने में

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

असमर्थ हो जाता है तो किसी अन्य योग्य प्रतिनिधि के द्वारा उनको अवश्य सम्पन्न कराना चाहिए-

प्रारब्धयोर्नित्यकाम्यकर्मणोः समाप्तिश्चावश्यमेव केनचिदन्येनाधिकारिणा कर्तव्येति नियमः (जैमिनीय न्यायमाला ६/२/३)

यह बात माधवीय ग्रन्थ में महर्षि बौधायन ने भी कही है कि नित्यकर्मों को प्रारम्भ करने के बाद कर्ता यदि स्वयं किसी विशेष कारणवश उनको पूरा नहीं कर पाता है तो अपनी शक्ति एवं अवस्था के अनुरूप जिस किसी तरह (किसी के द्वारा) नित्यकर्मों को पूरा करावें। नित्यकर्मों का लोप नहीं करना चाहिए-

यथाकथञ्चिन्नित्यानि शक्त्यवस्थानुरूपतः।

येन केनापि कार्याणि नैव नित्यानि लोपयेत् ॥

किसी अंग से हीन नित्यकर्म सम्पन्न अवश्य करना चाहिए यदि स्वयं न कर सके अन्य योग्य व्यक्ति से भी सम्पन्न कराना चाहिए।-

(यथा येन कथञ्चित्केनचिदंगेनहीनानीत्यर्थः । येन केनापि स्वतः परतोवेत्यर्थः ॥ रुद्र कल्पद्रुम १/१)

पशास्त्रदीपिका के न्यायानुसार प्रारम्भ किया गया काम्य कर्म भी नित्यकर्म की तरह ही होता है। अतः जिस प्रकार नित्य कर्म होता है। उसी प्रकार प्रारब्ध काम्य कर्म का भी लोप नहीं होना चाहिए, यही जैमिनी न्यायमाला के षष्ठाध्याय गत न्याय का निष्कर्ष है 1

आरम्भान्नियमो दोषश्चासमाप्तौ स्यात्, सामान्यदर्शनाच्चेति कात्यायनसूत्रात् ।

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

आरम्भान्नियमः

काम्यकर्म का आरम्भ करने के बाद नियमित रूप से उसको सामाप्त करना आवश्यक है। समाप्ति आवश्यक होने के नियम के कारण ही प्रतिनिधि की भी प्राप्ति होती है। अतः स्वयं रोगादिवशात् अशक्त होने पर प्रतिनिधि के द्वारा काम्य कर्म को पूरा कराना चाहिए।

आरम्भ किये हुए काम्य कर्म की समाप्ति न होने पर दोष होता है। क्योंकि जिस प्रकार नित्य कर्म का अनुष्ठान सम्पन्न न करने पर शिष्ट व्यक्ति के द्वारा निन्दा होती है, उसी प्रकार समानता के कारण आरब्ध काम्य कर्म को समाप्त न करने पर भी शिष्ट व्यक्ति के द्वारा निन्दा होती है। यह निन्दारूप दोष समाप्ति करने पर नहीं होता है-

दोषश्चासमाप्तौ स्यात्सामान्यात्

सामवेद के तान्ड्य ब्राह्मण में कहा गया है-

“यदि सोमं न विन्देत् पूतीकानभिषुणुयात् ।”

अर्थात् यदि सोमयाग में सोमलता न प्राप्त हो सके तो उसके प्रतिनिधि रूप में पूतीका द्रव्य लताविशेष का अभिषव (रस निकाल) कर सोमयाग सम्पन्न करना चाहिए।

चूंकि इसीप्रकार काम्य कर्म में प्रतिनिधि नहीं होता है, वह प्रतिनिधि केवल नित्य एवं नैमित्तिक कर्म में होता है, यह आरम्भ न किये गये काम्य कर्म के लिए कहा गया है अतः आरम्भ किया गया काम्य कर्म किसी अन्य व्यक्ति द्वारा भी यदि सम्पन्न (पूरा) न हो सके तो कोई दोष नहीं है-

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

'यत्तु-काम्ये प्रतिनिधिर्नास्ति नित्यनैमित्तिके च स इति" । तदनारब्धकाम्यपरम्, अन्येनाप्यसम्भवे न दोषः ॥ (रुद्रकल्पद्रुम)

माधव के अनुसार किसी व्यक्ति के रोगग्रस्त अंग होने पर या अत्यन्त रोगयुक्त हो, राजा एवं चोर आदि का भय हो तो ऐसी स्थिति में देव, गुरु पूजा आदि नित्य कृत्यों-कर्मों की हानि हो जाय अर्थात् उन कर्मों को न कर पावे तो न करने से कर्ता दोष या पाप का भागी नहीं होता है-

अत्यन्तरोगयुक्तेऽङ्गे राजचोरभयादिषु

गुर्वादिदेवकृत्येषु नित्यहानौ न पापभागिति ॥

यज्ञ कार्य में उपवास का स्वरूप

वाराह पुराण के वचनानुसार सायंकालिक सन्ध्या एवं अग्निहोत्र को छोड़ कर नित्य एवं नैमित्तिक आह्निक कर्म उपवास युक्त होकर करना चाहिए-

उपवासवता कार्य सायं संध्याहुतिर्विना । (वाराह पुराण)

पूजन पूर्व ग्रहणीय(भक्ष्य) द्रव्य

जल का प्राशन एवं औषधि सेवन किये बिना उपवास युक्त होकर काम्य एवं नैमित्तिक कर्मों के साथ नित्य-कर्म को सम्पन्न करना चाहिए-

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

जलस्यापि नरश्रेष्ठ! प्राशनाद्भेषजादृते ।

नित्यक्रिया निवर्तेन काम्यनैमित्तिकैः सह ॥ (कालिका पुराण)

ऊँख या ईख का (गन्ने का) रस, जल, दूध, कन्दमूल, फल, पान एवं औषधि को खाकर भी स्नान, दान आदि क्रियाओं को करना चाहिए, (यह जो चतुर्विंशतिमत में एवं स्मृत्यर्थसार में गन्ने आदि का परिगणन किया गया है। वह अशक्त या असमर्थ व्यक्ति के लिए कहा गया है। शक्तिमान् या समर्थ के लिए नहीं)-

इक्षुरापः पयोमूलं फलं ताम्बूलमौषधम् ।

भक्षयित्वापि कुर्वीत स्नानदानादिकाः क्रियाः ॥ चतुर्विंशतिमत, स्मृत्यर्थसार

यज्ञकर्म में स्नात (स्नान किये व्यक्ति) का अधिकार

स्नान भी यज्ञ कर्म के अधिकार से सम्बन्धित है। अर्थात् बिना स्नान किया व्यक्ति धर्म-कर्मादिक्रिया करने का अधिकारी नहीं हो सकता। आचार्य हेमाद्रिके चतुर्वर्ग चिन्तामणि नामक विशाल निबन्धग्रन्थ में प्रचेतस ऋषि का कथन है- देवता एवं पित्रों के कर्म में, मन्त्रों के जप में तथा दान क्रिया में स्नान किया हुआ व्यक्ति ही अधिकारी होता है। पवित्र नाम मन्त्र का है, मन्त्र को पवित्र कहा जाता है, (पवित्रम्- मन्त्रःपवित्रमुच्यते येन देवाः पविसुनते (निरु.

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

५।२।३४)

ऐसा यास्काचार्य ने निरुक्तशास्त्र में कहा है-
स्नातोऽधिकारी भवति दैवे पित्र्ये च कर्मणि ।
पवित्राणां तथा जाप्ये दाने च विधिचोदितः ॥

आग्नेय पुराण के प्रमाणानुसार मनुष्य (द्विज) सर्वदा सभी जलाशयों में से किसी भी जल से स्नानकर विधिवत् अपने कर्मों को कर सकता है -

आग्नेये-स्नानमपि सर्वेषां वारुणेन च मानवः ।

कर्तुमर्हति कर्माणि विधिवत्सर्वथा द्विजः ॥ (अग्निपुराण)

देवपूजन पूर्व संध्याकर्म अवश्य करणीय-

सन्ध्योपासन किया हुआ द्विज (ब्राह्मण) ही धर्म-कर्म करने का अधिकारी होता है। क्योंकि सन्ध्या वन्दन किये बिना व्यक्ति हमेशा अपवित्र रहता है एवं वह अपवित्र व्यक्ति (द्विज) सभी कर्मों (धर्म-कर्मों) को करने में अयोग्य होता है, ऐसा छन्दोगपरिशिष्ट (ग्रन्थ) में कात्यायन (महर्षि) ने कहा है-

कृतसन्ध्योपासनत्वमप्यधिकारितावच्छेदकम्

सन्ध्याहीनोऽशुचिनित्यमनर्हः सर्वकर्मसु । इति छन्दोगपरिशिष्टे कात्यायनः ॥

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग: १

सन्ध्या काल

धर्मसारग्रन्थानुसार- तारों से युक्त उत्तम सन्ध्या, तारों रहित मध्यमा एवं सूर्योदय होने पर अधम सन्ध्या कहलाती है। इस क्रम से प्रातः सन्ध्या तीन प्रकार की होती है-

उत्तमा तारकोपेता मध्यमा लुप्ततारका।

अधमा सूर्य सहिता प्रातः सन्ध्या त्रिधा मता ॥ धर्मसारः

इसीप्रकार सायं सन्ध्या भी तीन प्रकार की हैं— सूर्यनारायण के रहते हुए उत्तम सन्ध्या, (सूर्यास्तके बाद) जब तारे भी लुप्त रहे अर्थात् न दिखाई दें, वह मध्यम सन्ध्या है। जब तारे दिखाई दें तो वह कनिष्ठ-अधम-सन्ध्या कहलाती है। इस क्रम से सायं सन्ध्या तीन प्रकार की होती है -

उत्तमा सूर्यसहिता मध्यमालुप्ततारका।

कनिष्ठा तारकोपेता सायं सन्ध्या त्रिधामता ॥ (दक्ष, संवत्सरप्रदीप)

बुद्धिमान्—विद्वान् को प्रातः सन्ध्या वन्दन करने के बाद ही किसी अन्य अनुष्ठान का संकल्प करना चाहिए। सन्ध्याहीन द्विज हमेशा अपवित्र रहता है और वह किसी भी धर्म-कर्म अनुष्ठानादि में योग्य नहीं होता है। ऐसा व्यक्ति जो भी अन्य धर्म कर्म करता है, वह उस कर्म के फल को प्राप्त नहीं करता है।

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

ऐसा संवत्सरप्रदीप, नामक ग्रन्थ में दक्ष आचार्य का कथन है ॥

प्रातः सन्ध्यां ततः कृत्वा सङ्कल्पं बुध आचरेत् ।

सन्ध्याहीनोऽशुचिर्नित्यमनर्हः सर्वकर्मसु ॥

यदन्यत्कुरुते कर्म न तस्य फलमश्नुते॥

हेमाद्रि (चतुर्वर्गचिन्तामणि) एवं वाराह गृह्य सूत्र में भी स्नान-सन्ध्यादि कर्म के सन्दर्भ में कहा है- विधिवत् स्नान-आचमन एवं सन्ध्योपासनादि कर्म को किया हुआ, काम-क्रोध रहित, वैदिक धर्म-कर्म (व्यीधर्म) का खण्डन करने वाले पाखण्डी' व्यक्ति से सम्पर्क न रखने वाले, जितेन्द्रिय तथा सत्यवादी व्यक्ति सभी कर्मों में प्रशंसनीय है-

सुस्नातः सम्यगाचान्तः कृतसन्ध्यादिकक्रियः ।

कामक्रोधविहीनश्च पाखण्डः स्पर्शवर्जितः ॥

जितेन्द्रियः सत्यवादी सर्वकर्मसु शस्यते ॥(हेमाद्रि, वाराह गृह्यसूत्र)

कर्माङ्ग स्नान तथा मंगल स्नान

कर्माङ्ग स्नान

किसी कर्म के निमित्त स्नान अर्थात् कर्माङ्गभूत स्नान के विषय में मार्कण्डेय

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

पुराण में विशेष रूप से कहा गया है— सिर से स्नान किये हुए व्यक्ति को देव या पितृकर्म करना चाहिए। पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख क्षौरकर्म कराना चाहिए। पहले क्षौर कर्म करावे उसके बाद में ही सिर से स्नान करे । श्लोक की आनुपूर्वी के क्रम से यदि पहले स्नान एवं बाद में क्षौर कर्म (बाल बनाना) करावेगा तो पुनः स्नान करना पड़ेगा। अतः पहले क्षौरकर्म बाद में सिर से स्नान करे-

शिरस्नातस्तु कुर्वीत दैवं पित्र्यमथापि वा।

प्राङ्मुखोदङ्मुखोवाऽपि श्मश्रुकर्म च कारयेत् ॥ (मार्कण्डेयपुराण)

तत्रादौ श्मश्रुकर्म ततः शिरः स्नानम् अन्यथाऽशुचित्वापत्या पुनः स्नानापत्तेः ।
(रु०क० १/१३)

मंगल स्नान

उस उपर्युक्त क्षौर कर्म के बाद मांगलिकादि कार्य में तिल या आंवले आदि द्रव्यका लेपन या उबटन लगाकर स्नान करना चाहिए, जिससे कि शरीर निर्मल हो जाय-

तच्चस्नानं मङ्गलकृत्यादौ तिलामलकादिनोद्वाभ्यङ्गपूर्वकं वा कार्यम् ।
वही १/१३

आद्यं तु रुद्रकारिकायां परशुरामेणोक्तम् :-

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

ततः स्वगृहमागत्य मङ्गलस्नानमाचरेत् ।

सौषधीगन्धचूर्ण युक्तैः कृष्णतिलामलैः ॥

उद्धाङ्गानि तैलेन चंपकादिसुगन्धिना ।

तैलेन मङ्गलस्नानं कुर्वीत ब्राह्मणैः सह ॥ रुद्रकारिका २७

रुद्रकारिका के अनुसार क्षौरादि कर्म कराने के बाद अपने घर में आकर मङ्गल स्नान करना चाहिए। मांगलिक कार्य करने के पहले किया जाने वाला स्नान मांगलिक या मङ्गल स्नान कहा जाता है। इस मङ्गल स्नान में पहले सभी औषधि, गन्ध (सुगन्धितद्रव्य) सभी औषधि चूर्ण को काले तिल एवं आवले के चूर्ण के साथ तिल के तेल तथा चंपा आदि सुगन्धित द्रव्य से मिश्रित कर उसका शरीर पर लेपन (उद्धर्तन) कर ब्राह्मणों के साथ तेल से मङ्गल स्नान करना चाहिए ॥ यहां ब्राह्मण का स्नान मात्र उपलक्षण है आवश्यक नहीं है।

सर्वगन्ध

मदनरत्न में कुंकुम, अगरु कस्तूरी, कपूर, चन्दन तथा जातीफल-जायफल इन पदार्थों को विद्वानों ने सर्वगन्ध के नाम से अभिहित किया है-

कुंकुमागरुकस्तूरी कर्पूरं चन्दनं तथा ।

जातीफलमिति प्रोक्ताः सर्वगन्धाः सदाबुधैः । मदनरत्न

कपूर, चन्दन, कस्तूरी एवं कुंकुम को बराबर मात्रा में मिलाने पर सर्वगन्ध पदार्थ तैयार होता है जोकि देवताओं को अत्यन्त प्रिय होता है-

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661

यज्ञ कार्य मे आवश्यक अर्हता विमर्श

भाग:१

कपूरं चन्दनं दर्यः कुंकुमं च समांशकम् ।

सर्वगन्धमितिप्रोक्तं समस्तसुरवल्लभमिति ॥ (गरुणपुराण, चतुर्वर्ग चिन्तामणि में हेमाद्रि)

वृद्धि (पुत्रजन्मादि) जलाशय देवालय, बगीचा आदि पूर्त कर्म, पुत्रोत्सवादि कार्यों में मध्याह्न के पहले मांगल्य स्नान केवल तैलाभ्यंग करके करना चाहिए। अर्थात् मध्याह्न के बाद तैलाभ्यंग कर स्नान नहीं करना चाहिए-

मांगल्यं विद्यते स्नानं वृद्धिपूर्तोत्सवेषु च ।

स्नेहमात्र समायुक्तं मध्याह्नात्प्राक्तदिश्यते ॥ निर्णय सिन्धु में कात्यायनोक्त मत

सिर में लगे हुए तैल को शरीर के अन्य अंग में नहीं लगाना चाहिए । प्रायः ऐसा देखने में आता है कि व्यक्ति सिर में तेल लगाकर हथेली में लगे हुए तेल को मुँह बाह आदि अंगों में मल लेते हैं-

शिरोऽभ्यंगावशिष्टेन तैलेनांगं न लेपयेत् ॥ बृहन्नारदीय

आदि शंकर वैदिक विद्या संस्थान

दूरभाष:9044016661